आये लेकिन अपनसे बड़े हैं उनका भी विचार आता है।

मुमुक्षु :- एक अंतिम आशंका है, वह आपको पूछ लूँ। शास्त्र तो छठ्ठे-सातवें गुणस्थान में महामुनिओंने लिख हैं। ज्ञानीपुरुष चतुर्थ गुणस्थान में हो, तो शास्त्र लिखनेवाले तो उनसे विशेष है और उस शास्त्र में कहे अनुसार अर्थ करे और ज्ञानी को गौण करे तो उसमें कोई अविनय होता है?

समाधान :- शास्त्र आचार्योंने लिखे हैं और चतुर्थ गुणस्थानवाले हैं, फिर भी उस प्रकार का प्रयोजनभूत ज्ञान तो उसके पास भी है। प्रयोजनभूत ज्ञान है और खुद यदि मार्ग को प्राप्त नहीं किया है और शास्त्रोंसे समझ रहा है तो मूल मार्ग को जानने के लिये और प्रयोजनभूत तत्त्व को जानने के लिये उसे ज्ञानी का आश्रय आये बिना रहता नहीं। प्रयोजनभूत तत्त्व, चतुर्थ गुणस्थानवालेने स्वानुभूति का मार्ग उसने जाना है, मुक्ति का पंथ उसने जाना है तो खुदने यदि प्राप्त नहीं किया है तो उसे आश्रय आये बिना रहता नहीं। (सिर्फ) शास्त्रसे वह मूल प्रयोजनभूत तत्त्व को जान नहीं सकता अन्दरसे। जानता है तो वह अपनी बुद्धिसे जानता है तो भी उसे आश्रय आये बिना रहता नहीं, खुद को प्राप्ति नहीं हुई है तबतक जिसने प्राप्त किया है उनका आश्रय आये बिना रहता नहीं। एक अंश मुक्ति का पंथ जिसने जाना है उसमें केवलज्ञान पर्यंत का मार्ग आ जाता है। फिर शास्त्रों के दूसरे अर्थ, चरणानुयोग, करणानुयोग इत्यादि उसमें नहीं आता हो, लेकिन मूल प्रयोजनभूत तत्त्व साधना का मार्ग सम्यग्दर्शन प्राप्त करे उसमें आ जाता है। केवलज्ञान पर्यंत का मार्ग उसमें आ जाता है। कितने ही व्यवहार के कथन उसमें नहीं आये, लेकिन प्रयोजनभूत मार्ग उसके पास आ गया है। खुद जानता नहीं हो तो उसे आश्रय आये बिना रहता नहीं।

मुमुक्षु :- माताजी! एक बात आपने बहुत सुंदर कही, ऐसा हो तो पात्रता भी नहीं है। खुदसे जो बड़े हैं उनके लिये यदि उसे समझने का या सुनने का सद्भाव नहीं आता तो फिर तो पात्रतामेंसे भी वह जाता है।

समाधान :- जाता है, ऐसी जिज्ञासा उसे रहनी चाहिये।

मुमुक्षु :- ये तो खुद को कहीं दोष रह जाता हो तो स्पष्टता हो।

समाधान :- प्रयोजनभूत तत्त्व को जानने के लिये उसे अन्दरसे भावना रहनी ही चाहिये। शास्त्र में भले ही सब आ जाता है, शास्त्र में आचार्य के सब कथन आ जाते हैं, फिर भी रहस्य खोलनेवाले, जिसे स्वानुभूति प्रगट हुई है उनके पाससे जो रहस्य मिले वह अपनेआप निकालना तो मुश्किल है। गुरुदेव स्थानकवासी में थे तब ये सब तो कहाँ जानते थे कि स्वानुभूति किसे कहते हैं। हिन्दी में और सब जगह अन्दर स्वानुभूति होती है, वह कहाँ समझते थे। समयसार को छोड़ देते थे। बाहर में ही धर्म मान रखा था। ये क्रियामेंसे और इसमेंसे धर्म होगा। अन्दर स्वानुभूति होती है और अन्दर चिदानंद, सहज चिदान्द आत्मा का कंटाला आता था। सब हिन्दी में भी। स्थानकवासी तो देरावासी में तो कुछ था ही नहीं।

लेकिन गुरुदेवने कहा कि अन्दर स्वानुभूति होती है और अन्दर मार्ग है, वह मार्ग उन्होंने अन्दरसे स्वानुभूतिसे प्रकाशित किया। शास्त्र तो सब थे लेकिन कोई समझता नहीं था। क्षयोपशमज्ञान तो बहुतों को था और सब शास्त्र कंठस्थ भी किये थे, रहस्य तो गुरुदेवने खोला। निश्चय-व्यवहार की संधि तो उन्होंने की। निश्चयनय और व्यवहारनय के पाठ बोलते थे। निश्चय इसे कहते हैं और व्यवहार इसे कहते हैं, सात नय इसे कहते हैं। उन सबका रट्टा मार लेते थे, पढ़ लेते थे। मूल निश्चय किसे कहते हैं द्रव्य के आश्रयसे, उसका अर्थ-भावार्थ गुरुदेवने प्रगट किया। सब रट्टा मार लेते थे, ऋजूसूत्र इसे कहते हैं, नैगमनय इसे कहते हैं, उसमें घड़े का और पानी का दृष्टांत आये उसका रट्टा मार लेते थे। उसका अध्यात्म गुरुदेवने प्रगट किया।

स्वानुभूति, आत्मा विकल्प छूटकर उसपार बिराजता है, निर्विकल्प दशा स्वानुभूति प्रगट होती है, उसप्रकार की महिमा किसीको नहीं थी, सब ऐसे ही (चलता) था। पूरा मार्ग प्रकाशित किया। कौन जानता था? एास्त्र तो सब थे। सब धवल कंठस्थ किये, तत्त्वार्थ सूत्र किया, सब संस्कृत टीकाएँ कंठस्थ थी तो क्या हुआ? अहस्य अन्दरसे आये बिना कहाँ-से हो?

मुमुक्षु :- गुरुदेव का और वर्तमान में आप का महान-महान उपकार है कि इसप्रकार अर्थ को समझ सकते हैं, कुछ भाव पकड़ पाते हैं, यह सब उपकार ज्ञानियों का है।

समाधान :- भावसहित उनकी जो शैली आये, भाव ऐसे आश्चर्यसे आये तो दूसरों को असर होती है। बोलनेमात्र पाठमात्र बोले शास्त्रमेंसे, शब्द बोले आत्मा सहज चिदानंद, आदि पाठ बोले लेकिन वह कोई असर नहीं करता। वह तो मात्र पाठ रह जाता है। ये तो अन्दरसे दूसरे लोग डोलने लगे, ऐसी गुरुदेव की वाणी थी तो अंतर में असर कर जाती थी। उनका ज़ोर, निःशंकता और अपूर्वता लगे उससे दूसरों को असर होती है। वाणीसे ऐसे असर होती है। पाठ तो बहुत लोग बोल लेते हैं। शास्त्र तो सब थे। अब गुरुदेव की इतनी वाणी सुनी, सब को श्रवण हुई इसलिये सब अर्थ करना सीखे हैं कि इसका अर्थ ऐसा होता है, इसका ऐसा अर्थ होता है। शास्त्र में सब की बुद्धि चलती है वह गुरुदेव के प्रतापसे चलती है। शास्त्र में बुद्धि कहाँ किसीकी चलती थी? गुरुदेवने इतना स्पष्ट किया इसलिये सब (बोलने लगे कि), द्रव्य इसे कहते हैं, पर्याय इसे कहते हैं, निश्चय इसे कहते हैं, व्यवहार इसे कहते हैं। इसका व्यवहार पर ज़ोर आया, इसे निश्चय का ज़ोर आया, इसे ऐसा आया ऐसा सब करना सीखे हैं, वह गुरुदेव के प्रतापसे। नहीं तो कोई शास्त्र का समझ नहीं सकता था। बाहर के अर्थ करते थे। निमित्त आये तो कोई निमित्त तो चाहिये न, ऐसा तो कुछ चाहिये न, इतनी थोड़ी क्रिया तो चाहिये न। ऐसे कहीं न कहीं थोड़े-थोड़े में पड़े रहते थे। गुरुदेवने ज़ोरसे कहा। उनकी वाणी आयी (तो) सबके आग्रह छूट गये। अब सब अर्थ करना सीखे हैं। सब गुरुदेव के प्रतापसे। शास्त्रमेंसे अर्थ करना भी गुरुदेव के प्रतापसे सीखे हैं। शास्त्र के अर्थ तो रट्टा मारने जैसा करते थे सब। रट्टा मारते हो ऐसे।

पूज्य बहिनश्री की तत्त्वचर्चा–सी.डी.–५ A

आत्मा पहाचने बिना भव का अभाव होता नहीं और वास्तविक अन्दरसे विकल्प छूटते नहीं। मन्द होते हैं, कषाय मन्द होता है, शुभभाव होता है, वह सब होता है। लेकिन आत्मा को पहचाने तो सच्चा होता है। उसके लिये स्वाध्याय करे, वांचन करे, विचार करे। आत्मा क्या है उसका ध्येय रखे, जिज्ञासा रखे तो होता है। आत्मा को पहचाने बिना होता नहीं। अनन्त काल में बहुत किया है। मुनिपना लिया है, सब किया लेकिन आत्मा को पहाचाना नहीं। त्याग किया, सब किया लेकिन आत्मा को पहचाना नहीं। कषाय मन्द करे और जिनेन्द्रदेव–गुरु–शास्त्र की भक्ति इत्यादि सब किया लेकिन भव का अभाव हुआ नहीं। देवलोक मिला, लेकिन वहाँ–से संसार वैसे ही चालू रहा।

गुरुदेव को आत्मा को पहचानने की ही बात करते थे। आत्मा को पहचाने। आत्मा जाननेवाला ज्ञायक महिमावंत है, सब आत्मा में है, बाहर में कुछ नहीं है। ऐसा अन्तरसे निर्णय करे तो होता है। मंगलाबहेन के साथ स्वाध्याय करते हैं?

मुमुक्षु :– : कहते थे, क्रिया करते हैं लेकिन इसमें कुछ नहीं मिलता।

समाधान :– क्रिया में कुछ मिलता नहीं। अन्तर आत्मा को पहचाने तो होता है।

मुमुक्षु :– क्रिया करते हैं लेकिन मन अन्य स्थान में भटकता है। क्योंकि सूत्र सब आते हैं इसलिये ऐसे ही बोल लेते हैं।

समाधान :– लेकिन मन दूसरे स्थान में भटकता हो, बाहरसे पाठ बोले। भाव कोई नहीं हो और शुभभाव करे उसमें ध्यान रखे तो भी मन्द कषाय होता है, शुभभाव होता है तो सामान्य पुण्य होता है। लेकिन उसमें आत्मा का कुछ आता नहीं, आत्मा पहचानने में नहीं आता। आत्मा को पहचानने के लिये सद्गुरु क्या कहते हैं, गुरु क्या कहते हैं, गुरुदेवने क्या कहा है, उसका विचार करे। सत्य स्वरूप समझे तो आत्मा पहचानने में आये।

मुमुक्षु :– वांचन में चंदुभाईने बहुत अच्छा समझाया।

मुमुक्षु :– :

समाधान :– ठीक है। श्रम बहुत लगा।

मुमुक्षु :– .. उनको उद्वेग ही रहा करता है। उनको शांति कैसे मिले, उसके लिये वांचन,... वे तो एकदम .. रहनेवाले हैं।

समाधान :– फेरफार तो होते ही रहते हैं। भूल जाना एक उपाय है, दूसरा क्या हो सकता है? संसार में तो ऐसा चलता ही रहता है, क्या हो? संसार तो ऐसा ही है। चतुर्थ काल में भी आयुष्य तो पूर्ण होते थे। सागरोपम के आयुष्य और सब आयुष्य पूर्ण होते

हैं। चक्रवर्ती और मुनिओं सब मुनि होकर चल देते थे। मनमें–से सब निकालकर वैराग्य धारणकर चले जाते थे। ये सब भूलने जैसा ही है। अनन्त काल में कितनों को छोड़कर यहाँ आया और स्वयं को छोड़कर दूसरे चले जाते हैं। ऐसा तो चलता ही रहता है। यह कोई नवीन नहीं है। मनुष्यजीवन तो मुश्किलसे मिलता है। उसमें ऐसा योग मिला। गुरुदेव (मिले) और यह सब श्रवण करने मिला तो यह सब भूल जाने जैसा है। ऐसा सुन्दर स्थान और आपको गुरुदेव की वाणी कितनी मिली है, गुरुदेव का लाभ कितना मिला। वह सब सर्वोत्कृष्ट था, बाकी तो यह सब पुण्य का था। पुण्य के फेरफारसे सब फेरफार होता है। पुण्य तो शाश्वत रहता नहीं। उसमें फेरफार होता है। तो भी सर्वसे अच्छेसे अच्छा पुण्य तो वह कि गुरु मिले वह सबसे अच्छा पुण्य है।

मुमुक्षु :– उन्होंने तो भाव भी कितने अच्छे रखे थे।

समाधान :– कितने अच्छे भाव रखते थे। आपको तो इतनी भाव है तो मनमें–से यह सब निकाल देना।

मुमुक्षु :– आपके दर्शनसे शांति मिलती है। मामा की भक्तिसे प्रमोद आ जाता है।

समाधान :– क्या हो सकता है? संसार तो ऐसा ही है। याद आये लेकिन भूले बिना छूटकारा नहीं है।

मुमुक्षु :– माताजी! लोगोंने उनके लिये बहुत किया। सायन में एक बगीचा है...

समाधान :– पीछेसे आते थे, उनके साथ ले गये। यह सब भूलने जैसा है, क्या हो सकता है? आपके जसाणी कुटुम्ब में सब कैसे थे। वह सब भूलना ही पड़ता है। भूलना पड़ता है, क्या हो? नानालालभाई, मोहनभाई आदि सब कैसे थे!

मुमुक्षु :– ...

समाधान :– वह सब जैसे भूलना पड़ता है, वैसे यह सब भी भूलनेसे ही छूटकारा है। वह सब कैसी व्यक्ति थी! नानालालभाई, मोहनभाई, बेचरभाई..। वह सब भूलना ही पड़ता है, भूले बिना छूटकारा नहीं। यह सब भूलना ही है। एक गुरुदेव ऐसे मिले और गुरुदेव का लाभ आप सब को कितना मिला है। जसाणी कुटुम्ब को। गुरुदेव वहाँ ठहरते थे, यह सब लाभ यादकरके आनन्द करो। क्या हो सकता है? संसार तो ऐसा ही है।

मुमुक्षु :– जयंतिभाई को तो सुनाई नहीं देता था, फिर भी यहाँ आते थे।

समाधान :– हाँ, कितना रस था! ससंसार तो भूले बिना छूटकारा नहीं। वैराग्य का कारण हो ऐसा है यह संसार तो। इस संसार में जन्म–मरण ऐसे हैं, ऐसा विचारकर स्वयं को आत्मा का (हित) कर लेना जैसा है। संसार का स्वरूप ऐसा है। बड़े चक्रवर्ती चले जाते हैं तो इसका क्या हिसाब? चक्रवर्ती जब जाते होंगे तब कैसा होता होगा? चक्रवर्ती जब दीक्षा लेकर चले जाते हैं, तब क्या होता होगा? चक्रवर्ती जब जाते हैं तब उनकी सब ऋद्धियाँ एकदम चली जाती है, वह कैसा होता होगा? चतुर्थ काल में भी ऐसा सब

बनता है तो यह तो पंचमकाल है। भूले बिना छूटकारा नहीं है। चक्ररत्न प्रगट हुए होते हैं वह सब चले जाते हैं। उनकी ऋद्धियाँ जो चक्रवर्ती के उदयसे होती है वह ऋद्धियाँ चली जाती हैं, तो उनके कुटुम्बीओँ को कैसा होता होगा? संसार तो ऐसा ही है। सब वैराग्य धारणकर चल देते हैं। सब भूलने जैसा है। इस मनुष्यजीवन में गुरुदेव मिले यह याद करने जैसा है।

मुमुक्षु :- अभी तो आपकी शरण है, यह हमारा महाभाग्य है।

समाधान :- बदले बिना छूटकारा नहीं है। गुरुदेवने जो धर्म कहा है, उस धर्म पर ही चित्त लगाना, (बाकी सब) भूलने जैसा है। संसार तो ऐसा ही है। आदमी जब चला जाता है तब उसके गुण याद आते हैं। गुण याद आये लेकिन फिर दुःख लगानेसे कोई लाभ नहीं होता, भूले बिना छूटकारा नहीं।

मुमुक्षु :- आपकी वाणी सुनकर सुख-साता होती है।

समाधान :- पलटे बिना छूटकारा नहीं है। कोई उपाय है? उसका कोई उपाय है? चाहे जितना दुःख हो, चाहे जितने गुण याद आये, तो भी उसका कोई उपाय है? जो मनुष्य जाता है वह कोई उस स्वरूप में, उसप्रकारसे कोई आता है? कोई आता नहीं। इसलिये राग छोड़कर, विचारकरके बदल देना एक ही उपाय है। उसका कोई उपाय नहीं है। चाहे जितनी याद आये, जो जाता है उसका भव दूसरा हो जाता है। देव में जाता है तो वह मनुष्य उसही स्वरूप में वापस नहीं आता। चतुर्थ काल हो तो ऊपरसे देव आते हैं, देव के रूप में। लेकिन वह मनुष्य जिस स्वरूप में था उसही स्वरूप में कोई आता नहीं।

पूज्य बहिनश्री की तत्त्वचर्चा-सी.डी.-५A

मुमुक्षु :- ज्ञान का जो जानने का प्रकार है उसका निषेध करने में आये तो उसमें लाभ क्या होता है या नुकसान क्या होता है?

समाधान :- जो दृष्टि का विषय है वह सबको गौण करता है। एक पारिणामिकभाव को ही ग्रहण करता है, दृष्टि के विषयमें। एक को, मुख्य एक को ग्रहण करता है, बाकी सब गौण करता है। और ज्ञान है वह स्वयं अखण्ड को ग्रहण करता है और जो भेद है उसको भी ग्रहण करता है। अब, यदि उसका निषेध-ज्ञान का निषेध ही करे, मात्र दृष्टि को रखे तो दृष्टि हो नहीं सकती। दृष्टि के साथ ज्ञान हो तो ही दृष्टि सम्यक् होती है। दृष्टि के साथ ज्ञान हो तो ही साधना हो सकती है। दृष्टि की मुख्यतासे साधना होती है, लेकिन यदि ज्ञान नहीं रखे और अकेली दृष्टि (रखे, तो) अकेली दृष्टि हो नहीं सकती। अकेली दृष्टि हो तो दृष्टि सम्यक् होती ही नहीं। दृष्टि मिथ्या होती है। उसको नुकसान वह होता है।

लाभ यह होता है कि दृष्टि सम्यक् हो उसके साथ ज्ञान सम्यक् हो तो उसकी साधना भी सम्यक् प्रकारसे यथार्थ होती है। ज्ञान का बिलकूल निषेध करे तो दृष्टि की सम्यक्ता